Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

वेद - भूमिका

(स्वाध्यायोऽध्येतव्यः)

(स्वर्गीय महामहोपाध्याय श्री पं० विद्याधर शास्त्री गौड)

उपनीतस्य माणवकस्य 'स्वाध्यायोऽध्येतव्य' इत्यध्ययनं विहितम्। तत्र अध्यायशब्दः शाखापरः। तत्र स्वत्वस्य एकत्वस्य च विवक्षितत्वात् एकैव शाखा एकवेदसम्बन्धिनो स्वपरम्परागता अध्येतव्या। 'अनया त्रय्या विद्यया लोकं जयति,' 'वेदानधीत्य वेदौ वाऽपि वेदं वापि यथाक्रमम्' इत्यादि-शाखापर्यालोचनया वेदान्तराध्ययनस्यापि कर्तव्यतावगमात् ऋग्वेदादिषु एकैकस्मिन् वेदे एकैका शाखा अध्येतव्या इति फलति। तत्रापि प्रथमं स्वशाखाम-धीत्य वेदान्तरगतशाखान्तराध्ययनं कर्तव्यम्। इदं सर्वं पूर्वमीमांसायां द्वितीयाध्यायस्य चतुर्थपादे शाखान्तराधिकरणे वार्तिकादौ स्पष्टम्।

तत्रापि श्रौतानि कर्माणि, स्मार्तानि शान्तिकपौष्टिकानि च स्वशाखयैव कर्तव्यानि। स्वशाखायालाभे तां परित्यज्य शाखान्तरपरिग्रहे प्रत्यवाय-स्मरणात्। अलाभे तु स्वशाखाऽविरुद्धं शाखान्तरोक्तमप्युपादेयम्। अत्र प्रमाणवचनानि वीरमित्रोदय—रुद्रकल्पद्रुमादावुक्तानि। तानि यथा—

'पारम्पर्यगतां मुक्त्वा स्वां समाख्यादि बन्धिनीम्। शाखां, शाखान्तरं युक्तं नाध्येतुं सदृशे श्रमे ॥' 'पारम्पर्यगतो येषां वेदः सपरिबृंहणः। तच्छा-खीयैस्तु संस्कारैः संस्कृतो ब्राह्मणो भवेत् ॥ अधीत्य शाखामात्मीयां परशाखां ततः पठेत्।' 'स्वेन पित्रादिभिर्वाऽपि यः कल्पादि. पुराऽदृतः। स तु नैव परित्याज्यः इति वेदानुशासनम् ॥' 'एकवेदेऽपि शाखानां मध्ये योऽन्यतमां श्रयेत्। स्वशाखां तु परित्यज्य शाखारण्डः स उच्यते ॥' 'यः स्वशाखां परित्यज्य पारक्यामधिगच्छति। स शूद्रवद् बहिष्कार्यः सर्वस्माद् द्विजकर्मणः ॥' 'आत्मशाखां परित्यज्य परशाखासु वर्तते। उच्छेत्ता तस्य वंशस्य रौरवं नरकं व्रजेत् ॥' स्वीया शाखोज्झिता येन ब्रह्मतेजोऽर्थिना स्वयम्। ब्रह्महैव परिज्ञेयः सर्वकर्मसु गर्हितः ॥ न जातु परशाखोक्तं बुद्धः कर्म समाचरेत्। आचरन् परशाखोक्तं शाखारण्डः प्रकीर्तितः ॥ यः स्वशाखोक्तमुत्सृज्य परशाखोक्तमाचरेत्। अप्रमाणमृषिं कृत्वा सोऽन्धे तमसि मज्जति ॥ स्वशाखा-श्रममुत्सृज्य परशाखाश्रमं तु यः। कर्तुमिच्छति दुर्मेधा मोघं तत्तस्य चेष्टितम् ॥ अक्रिया त्रिविधा प्रोक्ता विद्वद्भिः कर्मकारिणाम्। अक्रिया च परा

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

प्रोक्ता तृतीया चायथाक्रिया ॥ ऊनो वाऽप्यतिरिक्तो वा यः स्वशाखोदितो विधिः । तेनैव तनुयाद्यज्ञं न कुर्यात्पारशाखिकम् ॥ बहुलं वा स्वगृह्योक्तं यस्य यावत्प्रकीर्तितम् । तस्य तावति शास्त्रार्थे कृते सर्वः कृतो भवेत् ॥ यत्राम्नातं स्वशाखायां पारक्यमविरोधि यत् । विद्वद्भिस्तदनुष्ठेयमग्निहोत्रादिकर्मवत् ॥ परशाखोऽपि कर्तव्यः स्वशाखायां न नोदितः । सर्वशाखासु यत्कर्म एकं प्रत्यवशिष्यते—इति ॥

एवमाचार्यस्यापि कारयितुः स्वशाखीयस्य लाभे प्रथमं स एव शान्त्यादिकर्मसु वरणीयः । तेनाप्याचार्येण गुरुमुखात् यथावदधीतवेदेन सम्यक् ज्ञातकर्मकाण्डप्रक्रियेण च भाव्यम् । अन्यथाऽऽचार्यस्याध्ययनाद्यभावेऽनधीतानां मन्त्राणां फलाजनकत्वस्य तत्र तत्र शास्त्रकारैः समुद्घुष्यमाणत्वात् । तादृशैर्मन्त्रैः कृतं कर्म न केवलं निष्फलं भवति अपि तु 'मन्त्रो हीनः स्वरतो वर्णतोवे'ति न्यायेन कर्मकर्तुर्यजमानस्यानिष्टमपि सम्पादयति । अतश्च यद्याचार्यः अधीतवेदः स्वशाखीयो लभ्यते तदा स एव ग्राह्यः । यदि तादृशा न लभ्यते तर्हि अन्यशाखीयोऽपि, यदि यजमानशाखां विधिवदधीत्य तच्छाखीयान् पदार्थांश्च सम्यग् जानाति स एव कर्मसु नियोज्यः न तु स्वशाखीय इति कृत्वा अनधीतवेदः अपरिज्ञानकर्मकलाप आचार्यो याजनीयः । एतदभिप्रायेणैव सर्वे आचार्या यजमानशाखीया एव । अन्यथाऽऽचार्यस्य यजमानशाखाध्ययनाभावे तच्छाखीयपदार्थानां निर्वाह एव न स्यात् । स्वशाखयाऽनुष्ठाने वैगुण्यं स्यात् इति प्रतिष्ठेन्दुशान्तिकमलाकरादावुक्तम् । एवं च रुद्रकल्पद्रुमे–'रुद्राध्यायस्य च यजुर्वेदशाखास्वेव आम्नातत्वेन तदितरवेदशाखासु तदभावेन च यजुर्वेदभिन्नवेदशाखीयानां रुद्राध्ययनाभावेन तज्जपादौ तेषामनर्हत्वम् । अत एव बह्वृचाश्छन्दोगा आथर्वणाश्च विप्रा रुद्रजपादावार्त्विज्ये वर्ज्या यथाह शाङ्खायनः—बह्वृचाः सामगाश्चैव तथा चाथर्वणा द्विजाः । महारुद्रजपेनैव शस्तास्ते श्रुतिधर्मतः' इति । यदुक्तं तत् अनधीतरुद्राध्यायस्य आर्त्विज्यनिषेधपरतया नेयम् । न तु रुद्राध्यायिनोऽपि अन्यशाखीयस्य निषेधपरम् । अत एव च 'बह्वृचाद्या अपि याजुषरुद्राध्ययनवन्तो रुद्रजपसमर्थास्तु वरीतव्या' इत्युत्तरत्र तत्रैव लिखितम् । एवं सर्वत्र यजमानसमशाखीया इति पद्धतिकाराणामभिप्रायो बोध्यः—यद्यपि, वेदैकनिष्ठं धर्मज्ञं कुलीनं श्रोत्रियं शुचिम् । स्वशाखाढ्य (ज्ञ) मनालस्यं विप्रं कर्तारमीप्सितम्' इति श्लोके आचार्यस्वरूपनिरूपणपरे स्वशाखाढ्यमित्यस्ति पदम् । तेन च स्वशाखीय एव आचार्यः कर्तव्य इति प्रतिभाति, तथापि अन्यवाक्यस्य उपनयनप्रकरणस्थत्वात् उपनेतृस्वरूपमात्रनिरूपणपरत्वम्, नतु शान्तिकपौष्टिकादि—सर्वकर्मसु अस्य वचनस्य प्रवृत्तिः सम्भवति । अन्यप्रकारणस्थस्य वचनस्य अन्यत्र गन्तुमसामर्थ्यात् । अत एव च सर्वैरपि निबन्धकर्तृभि-

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

र्वचनमिदमुपनेतुराचार्यस्य स्वरूपनिरूपणपरतयैव व्याख्यानम्, यथास्मृतिमुक्ताफले—उपनयनकर्तारमाह व्यासः—वेदैकनिष्ठमिति। वीरमित्रोदये—संस्काररत्नमालादावपि उपनेतृपरकत्वमेवास्य वचनस्योपवर्णितम् न तु कारयितृपरकत्वमुक्तं कुत्रापि। लोकेऽपि च इदानीं यजुराद्येकशाखीयः स्वशाखां प्रथमतोऽधीत्य ततो वेदान्तरगतं शाखान्तरमप्यधीयानः तद्वेदीयं होत्रमौद्गात्रं च श्रौतेषु कर्मसु करोत्येव। शिष्टा अपि तत्कर्म सदाचारयता परिगृह्णन्त्येव। अतश्चेदं सिद्धं भवति प्रथमतः स्वशाखाध्यायी स्वशाखीय-आचार्यत्वेन कर्मसु नियोक्तव्यः। तदलाभे अन्यशाखीयोऽपि यजमानशाखामधीतवांश्चेत् सोऽपि नियोगमर्हति प्रथमतः स्वशाखीयस्यैव प्रतीतेः, इतरशाखीयस्य बिलम्बेन प्रतीतेश्च। प्रथमोपस्थितपरित्यागे कारणाभावाच्चेति शम्[1]।

(वेदों में शाखा-भेद)

(स्वर्गीय महामहोपाध्याय श्री विद्याधर शास्त्री गौड)

वैदिक वाङ्मय जितना ही गम्भीर और गहन है, उतना ही विस्तृत भी। मनुष्य के एक जीवन में तो सम्भवतः समूचे वैदिक वाङ्मय का अवलोकन करना भी कठिन है, मनन तो दूर रहा। चार वेद, चार उपवेद, वेदों की विभिन्न सहस्र शाखाएँ ब्राह्मण भाग, सूत्र ग्रन्थ, अंग और उपाङ्ग इत्यादि मिलाकर वैदिक वाङ्मय इतना विशाल बन जाता है, कि एक मानव जीवन उसके लिए कुछ भी नहीं है। दुर्दैव योग से बुद्धि के क्रमिक ह्रास के कारण एवं अनेक आधुनिक कारणों से वैदिक वाङ्मय के अधिक अंश विनष्ट हो गये हैं। शेष भाग भी शनैः शनैः विस्मृति की घोर निशा में विलुप्त होते जा रहे हैं। वेदों के शाखा-साहित्य को ही लीजिए। यह इतना विस्तृत और विपुल था कि यदि यह पूर्ण रूप से उपलब्ध होता तो आज इसके लिए एक विस्तृत स्थान की आवश्यकता होती। वेदों की शाखा के सम्बन्ध में व्याकरण महाभाष्य के प्रणेता महर्षि पतञ्जलि ने लिखा है— "एकशतमध्वर्युः शाखाः, सहस्रवर्त्मा सामवेदः, एकविंशतिधा बह्वृचम्, नवधाऽथर्वणो वेदः।"

अर्थात् 'यजुर्वेद की एक सौ शाखाएँ' सामवेद की एक हजार, ऋग्वेद की इक्कीस और अथर्ववेद की नौ शाखाएँ हैं। किसी किसी आचार्य के मत से अथर्ववेद की पन्द्रह शाखाएँ हैं। इस प्रकार सहस्र से ऊपर वेद की शाखाएँ मालूम होती हैं। वेद के अनेक भागों के होते हुए भी मुख्यतः

---

(१) सूर्योदय से—सं० १९९६।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

दो भेद हैं। एक का नाम मन्त्र-भाग या संहिता भाग है और दूसरे का नाम ब्राह्मण भाग है। वेद के लक्षण में मन्त्र और ब्राह्मण दोनों ही का समावेश किया गया है। दोनों ही अनादि हैं और अपौरुषेय हैं।

मीमांसकों के मत से उसे मन्त्र कहते हैं—जिसमें यज्ञ के द्रव्य, देवता और क्रिया कलाप आदि का वर्णन हो। और ब्राह्मण उसे कहते हैं जो उन मंत्रों का यथोचित विनियोग और प्रयोग बतलाते हुए धर्म के स्वरूप का परिचय करा दे। इसलिए प्रत्येक मन्त्र भाग के साथ ब्राह्मण भी अनिवार्य रूप से रहता है। भिन्न वेदों की जितनी शाखाएँ हैं उनमें प्रत्येक में, पद्यात्मक संहिता भाग और गद्यात्मक ब्राह्मण भाग भी अवश्य रहता है। इस प्रकार गद्य-पद्य-रूप वेद की विभिन्न शाखाओं के सम्बन्ध में संक्षिप्त रूप से प्रकाश डालना ही कतिपय पंक्तियों का उद्देश है। वेदों की अधिकांश शाखाएं तो अब विलुप्त प्राय: हैं। इनी गिनी शाखाएँ जो उपलब्ध होती हैं, उन्हीं का विशेष परिचय आवश्यक है।

(शाखा शब्द का अर्थ)

शाखा शब्द का अर्थ अवयव या हिस्सा नहीं है जैसे रामायण के छ: फाण्ड हैं या महाभारत के अठारह पर्व। ये काण्ड और पर्व उनके अवयव हैं। एक-एक काण्ड या एक-एक पर्व एक-एक स्वतन्त्र ग्रन्थ नहीं माना जा सकता; क्योंकि वह एक एक से सापेक्ष और अनुबद्ध है। परन्तु वेदों की शाखाएँ परस्पर सापेक्ष और अनुबद्ध नहीं हैं। अठारह पर्वों के या सात काण्डों के समुदाय का नाम महाभारत और रामायण है, परन्तु इक्कीस शाखाओं के समुदाय का नाम ऋग्वेद नहीं है, प्रत्युत प्रत्येक शाखा स्वतन्त्र रूप से ऋग्वेद है। क्योंकि एक शाखा दूसरी शाखा की अपेक्षा नहीं रखती। इसलिए किसी भी वेद की एक शाखा का अध्ययन करने ही से समग्र वेद का अध्ययन माना गया है। मीमांसा शास्त्र के प्रणेता महर्षि जैमिनि ने "स्वाध्यायोऽध्येतव्य:"—इस वैदिक आज्ञा का अर्थ करते हुए लिखा है कि अपनी परम्परागत एक किसी भी शाखा का अध्ययन करना चाहिये। यदि इक्कीस शाखाओं को मिलाकर एक ऋग्वेद माना जाय और एक हजार शाखाओं के समुदाय को सामवेद माना जाय तो एक मनुष्य अपने एक जीवन में एक वेद का सम्पूर्ण अध्ययनन कर सकेगा। इस प्रकार तो मनु की यह आज्ञा भी असंगत हो जाती है—"वेदानधीत्य वेदौ वा वेदं वापि यथाक्रमम्। अविलुप्त ब्रह्मचर्यो गृहस्थाश्रममाविशत्॥" अर्थात् द्विजाति मात्र ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए तीनों वेदों, दो वेदों या एक ही वेद को पढ़कर गृहस्थाश्रम में प्रवेश करे।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

ब्रह्मचर्य का काल आठ, बारह, चौवीस या अड़तालीस वर्ष बतलाया गया है। इतने ही क्या, सौ वर्ष में भी समस्त शाखाओं के सहित वेदों का अध्ययन कठिन ही नहीं प्रत्युत्त असम्भव भी है। अतः एक ही शाखा का अर्थ वेद है। जिसकी जो शाखा हो उसका वही वेद है। यही वास्तविक शास्त्रीय सिद्धान्त है। यह शाखा भेद कर्ता के भेद से नहीं माना जा सकता है। जैसे एक ही राम की कथा बाल्मीकी, आनन्द, अद्भुत और अध्यात्म आदि अनेक रामायणों में भिन्न २ कर्ताओं द्वारा भिन्न प्रकार से वर्णित किये जाने पर भिन्न है। उसी प्रकार वेद की भी भिन्न भिन्न शाखाएँ भिन्न भिन्न महर्षि द्वारा संकलित किये जाने के कारण पृथक् हैं ऐसा भी कुछ नवीन लोगों का सिद्धान्त है। परन्तु यह भी भ्रम मात्र है। ऋषियों शक्ति मंत्रों को आगे पीछे रखने में भले ही हो, परन्तु पदों या वाक्यों को इधर उधर करने की शक्ति कदापि नहीं है, क्योंकि वेद अपौरुषेय है। उनमें पुरुष कर्तृत्व की शङ्का स्वप्न में भी नहीं की जा सकती। इसलिए वेदों के समान उनकी शाखाओं का भेद भी अनादि सिद्ध ही है। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं किया जा सकता।

(ऋग्वेद की शाखा)

ऋग्वेद की कुल २१ शाखाएँ हैं यह पहले ही कहा जा चुका है। इन इक्कीस शाखाओं में से इस समय दो ही शाखाएँ मिलती हैं—एक 'बाष्कला' और दूसी शाकला। इन दोनों के अतिरिक्त अन्य उन्नीस शाखाएँ इस समय काल क्रम से लुप्त हो गई हैं। उक्त दोनों शाखाओं में विशेष अन्तर नहीं है। शाकल संहिता में ऋचाओं का विभाग मण्डल और सूक्त नामों से किया गया है। और बाष्कल संहिता में यही विभाग अध्याय एवं वर्ग आदि नामों से किया गया है। परन्तु आज कल इन दोनों सूक्ष्मतर भेदों को न मानकर अध्याय और मण्डल आदि की संख्या सम्मिलित कर दी गयी है। ऋग्वेद में कुल चौंसठ अध्याय, आठ अष्टक, दस मण्डल, दो हजार छ वर्ग एक हजार सूक्त पचासी अनुवाक और दस हजार चार सौ चार मन्त्र हैं।

(यजुर्वेद की शाखा)

यजुर्वेद के दो विभाग हैं—शुक्ल और कृष्ण। दोनों ही प्रकार के यजुर्वेदों की कुल मिलाकर एक सौ एक शाखाएँ हैं; परन्तु वे सब लुप्त हैं

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

इस समय केवल ५ - ६ शाखाएँ मिलती हैं। शुक्ल की काण्व और माध्यन्दिनी ये दो शाखाएँ और कृष्ण की तैत्तिरीया, कठी, और मैत्रायणी, ये ३ शाखाएँ उपलब्ध हैं। कृष्ण यजुर्वेद की जो तीन शाखाएँ इस समय उपलब्ध हैं उनमें मन्त्र और ब्राह्मण भागों को अलग अलग नहीं किया है। संहिता में ही पहले कुछ मन्त्र लिखकर उसी प्रपाठक में ब्राह्मण कहा गया है। किसी २ प्रपाठक में या काण्ड में दोनों भाग एक साथ ही वर्णित हैं और कहीं कहीं भिन्न रूप से। यद्यपि कृष्ण यजुर्वेद की तैत्तिरीया शाखा में मन्त्र और ब्राह्मण भाग दोनों पृथक् पृथक् कहे गये हैं तथापि अनेक मन्त्र ब्राह्मण भाग में और अनेक ब्राह्मण मंत्र भाग में पाये जाते हैं। मैत्रायणी संहिता और कठ संहिता में केवल मंत्र भाग मिलता है, ब्राह्मण भाग नहीं। किन्तु इन दोनों संहिताओं में भी मंत्र और ब्राह्मण भाग संमिलित ही मालूम पड़ता है। इन दोनों संहिताओं में प्रायः परस्पर समानता ही है। इनके विषय भी प्रायः समान ही हैं। तैत्तिरीय संहिता इन दोनों से भिन्न है। तैत्तिरीय संहिता में काण्ड प्रपाठक और अनुवाक् इन नामों से विभाग किया गया है। इसकी संहिता में सात काण्ड और ब्राह्मण में तीन काण्ड हैं। ब्राह्मण भाग के काण्डों का दूसरा नाम अष्टक भी है। संहिता में चौआलीस प्रपाठक और छः सौ इक्यावन अनुवाक हैं। ब्राह्मण में पच्चीस प्रपाठक और तीन सौ आठ अनुवाक हैं। कठ संहिता में भिन्न याज्ञिक विषयों के अनुसार आठ विभाग हैं, इस संहिता में इन भागों का नाम स्थान कहा गया है।

मैत्रायणी संहिता में चार काण्ड हैं, और चौअन प्रपाठक। इसके अतिरिक्त आरण्यक भाग भी है, जिसमें बारह प्रपाठक हैं। यह तैत्तिरीय संहिता में है। शुक्ल यजुर्वेद की दो ही शाखाएँ मिलती हैं एक माध्यन्दिनी और दूसरी काण्व। इन दोनों के ब्राह्मण भी पृथक् हैं जिनका नाम शतपथ है। माध्यन्दिनी शाखा के शतपथ में नौ काण्डों तक संहिता के अनुसार ही ब्राह्मण का भी क्रम है सिर्फ पितृ पिण्ड यज्ञ को छोड़कर क्योंकि याग के मन्त्र दर्श-पौर्ण मास के अनन्तर कहे गये हैं और ब्राह्मण में आधान के अनन्तर बस, इतना ही भेद है। काण्व संहिता में पहले दर्श पूर्णमास सम्बन्धी मन्त्र पढ़े गये हैं और ब्राह्मण का प्रारम्भ आधान से होता है।

शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिनीय में ४० अध्याय और १९७५ मन्त्र हैं। चरणव्यूह के अनुसार १८०० और सी० वी० के वैद्य के अनुसार १९०० मंत्र हैं। इसमें ३०३ अनुवाक् हैं।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(सामवेद की शाखा)

यद्यपि प्राचीन आचार्यों ने एक सहस्र शाखा बतलाई हैं, परन्तु इस समय इसकी तीन शाखा ही मिलती हैं। १-कौथुमी, २-जैमिनीया और ३-राणायनीया। द्रविड देश में ये तीन शाखा अब भी मिलती हैं। उनमें भी सबसे अधिक कौथुमी उससे कम राणायनीया और जैमिनीया शाखा तो बहुत ही कम पायी जाती है। गुर्जर देश में कौथुमी और महाराष्ट्र मे राणायनीया ही अधिकता से प्रचलित हैं। चरण व्यूह नामक ग्रन्थ के प्रणेता महीदास ने सामवेद की सोलह शाखा मानी हैं, और उनमें इन्हीं तीन शाखाओं का अस्तित्व माना है, क्योंकि इस समय ये ही तीन शाखा प्रचलित हैं, यद्यपि अभी तक सामवेद की एक मात्र कौथुमी शाखा ही मुद्रित है। राणायनीया शाखा में १५४९ मन्त्र हैं। तथापि द्रविड देश में इन तीनों शाखाओं के पढ़ने वाले अब भी मिलते हैं। वेद सर्वस्वकार ने जो यह लिखा है कि इस समय वे तीनों शाखा नहीं मिलतीं वह परिचय के अभाव से लिखा है। वस्तुतः ये तीनों शाखा अभी तक जीवित हैं। सामवेद में १८२४ मंत्र हैं। उनमें दो भाग हैं १-छन्द संहिता और २ री उत्तर संहिता भाग। इन दोनों का नाम पूर्वार्चिक और उत्तरार्चिक भी है। पूर्वार्चिक में छः और उत्तरार्चिक में तीन प्रपाठक हैं। यज्ञ में या ईश्वरोपासन में तल्लीन भक्तजन जिन मंत्रों को ऋचाओं में गाते हैं वे साम कहे जाते हैं। गान संहिता के चार भाग हैं। १-गेय, २ ऊह, ३ उह्य, और ४ आरण्यक। सामवेद के आठ ब्राह्मण हैं—१ ताण्ड्य, २ षड्विंश, ३ मंत्र, ४ दैवत्, ५ आर्षेय, ६ सामविधान, ७ संहितोपनिषद्, और आठवा वंश इन सब ब्राह्मणों में ताण्ड्य ब्राह्मण ही सर्व प्रधान है इसीलिए उसका नाम महाब्राह्मण भी है। प्रौढ़ ब्राह्मण और पंचविंश ब्राह्मण भी इसी के नाम हैं।

(अथर्ववेद की शाखा)

अथर्व वेद की ९ या १५ शाखा कही गयी हैं। उनमें से वर्तमान समय में दो ही प्राप्त हैं—१ पिप्पलाद, २ शौनक। इन्हीं २ शाखाओं की २ संहिता भी हैं—१ पिप्पलाद संहिता, २ शौनक संहिता। शौनक संहिता ही प्रधान रूप से प्रचलित और मुद्रित भी है। इसमें २० काण्ड ७५९ सूक्त और ५९७७ मन्त्र हैं। इस वेद का एक मात्र गोपथ ब्राह्मण ही उपलब्ध है। इनके अतिरिक्त वेद की अनेकानेक शाखाएँ और अनेक ब्राह्मण समय के हेर फेर से विलुप्त हो गये हैं।

नोट—गङ्गा के वेदाङ्क से उद्धृत।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(ग्रह यन्त्र और ग्रहों के वर्ण आदि)

महानिर्माणयन्त्रे—ग्रहयन्त्रं प्रवक्ष्यामि सर्वशान्तिविधायकम् । यत्र संपूजिताः सेन्द्रा ग्रहा यच्छन्ति वाञ्छितम् ॥ त्रित्रिकोणैर्लिखेद्यन्त्रं तद्बहिर्वृत्तमालिखेत् । विदध्याद् वृत्तलग्नानि दलान्यष्टौ च तद्बहिः॥ चतुर्द्वारान्वितं कुर्यात्भूपुरं सुमनोहरम् । वासवेशानयोर्मध्ये भूपुरस्य बहिःस्थले ॥ वृत्तं विरचयेदेकं प्रादेशपरिमाणकम् । रक्षोवारुणयोर्मध्ये चापरं कल्पयेत्तथा ॥ नवग्रहाणां वर्णेन नवकोष्ठानि पूरयेत् । मध्यत्रिकोणद्वौ पार्श्वौ सत्यदक्षिणभेदतः ॥ श्वेतपीतौ विधातव्यौ पृष्ठभागः सितेतरः । अष्टदिक्पतिवर्णेन वर्णान्यष्टौ प्रपूरयेत् ॥ सितरक्तासितैश्चूर्णैः पुरः प्राकारमाचरत् । पुरो बहिःस्थे द्वे वृत्ते देवि प्रादेशसंमिते ।। उपर्यधः क्रमेणैव रक्तश्वेते विधाय च । सन्धिस्थानानि मन्त्रस्य स्वेच्छया रंजयेत्सुधीः ॥

(ग्रहों के पूर्वादि दिशाओं के रंग)

विधान पारिजाते-पृ० ६११—उत्तरा च भवेच्छुक्ला रक्ता प्राची प्रकीर्तिता । दक्षिणा पीतवर्णा स्यात्कृष्णा ज्ञेया च पश्चिमा ॥ पद्मवर्णा तथैशानी ताम्रा स्यात्पूर्वदक्षिणा । पालाशी च विनिर्दिष्टा तथा दक्षिणपश्चिमा ॥ नीलोत्पलसवर्णा तु वायव्या प्रकीर्तिता ।

(मेषादि राशियों के रंग)

विधानपारिजाते—राशिवर्णानथो वक्ष्ये यथावदनुपूर्वशः । राशिस्थानानि सर्वाणि राशिवर्णेन रञ्जयेत् । अरुणश्च सितश्चैव हरितः पाटलस्तथा । आपाण्डुरश्च विचित्रश्च कृष्णश्च कपिलस्तथा । पिङ्गलः कपिलो बभ्रुर्मलिनश्च यथाक्रमम् ॥ मेषादीनां विनिर्दिष्टा वर्णाः पार्थिवसत्तम ॥

—दौलतरामगौड

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

क्षत्रियो वापि वैश्यो वापि पथि स्थित: ॥ धर्मार्थकाममोक्षार्थं वेदपारायणं चरेत् । स्वयं पारयितुं वेदं न शक्नोति यदि द्विज: ॥ पारयेद्बुधविद् वेदं ब्राह्मणेन स्वसन्निधौ । ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेद: सामवेदोप्यथर्वण: ॥ अनुलोमविलोमाभ्यामेतेषु श्रवणं स्मृतम् । यदा तु चतुरो वेदान् श्रोतुं नैव क्षमो भवेत् ॥ पूर्वोक्तेन विधानेन स्वशाखां शृणुयात्तत: । चतुर्वेदविदो विप्रान् सर्वांश्चैव प्रसादयेत् ॥ तेषां वरणं कार्यं वेदपारायणाय वै । आदौ कृत्वा यथाशक्ति: प्रायश्चित्तं यथोदितम् ॥ वक्तारं स्वर्णवस्त्रादिदानेनाभ्यर्चयेत्तत: । सोपस्करं तु दद्यात्तु तस्मै गोमिथुनं तदा ॥ एकाग्रचेता: शृणुयात्तस्माद्वेदं प्रयत्नत: । गणेशं पूजयित्वा तु नित्यं दीपादिभिस्तथा ॥ कलशस्थापनं कुर्यान्नारिकेलफलान्वितम् । कृत्वा हेममयं देवं पुरुषं कलशोपरि ॥ स्थापयित्वा तु कौशेयं चन्दनादिभिरर्चयेत् । एकभुक्तिमध: सुप्तिं ब्रह्मचर्यं च वाग्यतम् ॥ एतांश्चान्यांश्च नियमानासमाप्ति समाचरेत् । एवं श्रुत्वा तु विधिवद् वेदान्साङ्गान्प्रयत्नत: ॥ स्वशाखां वापि सकलां पारयित्वार्चयेद् द्विजम् । तस्मै दद्याच्च गामेकां सवत्सां च पयस्विनाम् ॥ स्वर्णशृङ्गादिमाल्योक्तलक्षणै: समलङ्कृताम् । पारायणफलावाप्त्यै वस्त्रालङ्कारचन्दनै: ॥ अर्चयित्वा तत: सम्यक् तस्मै दद्याच्च दक्षिणाम् । उत्तमा तु भवेत्तस्य पलानां तु चतुष्टयम् ॥ सुवर्णानां चतुष्कं च मध्यमा च प्रकीर्तिता । अत्यन्ताशक्तौ तु दद्यादेकं सुवर्णमात्रकम् ॥ अत्यशक्तौ कृष्णलं तु सवर्णीकं प्रकीर्तितम् । ततो न्यूना तु या सा तु फलहानिकरी भवेत् ॥ ब्राह्मणो दश गा दद्यादनड्वाहं ततोऽधिकम् । क्षीराधिकं ततो वैश्यं तथा प्रादेशिको हयम् ॥ राजा दद्याद्वर ग्रामं समूहो राजवत्तथा । यथोक्तदक्षिणां दद्यात् सकलं फलमश्नुते ॥ एवं स्वशक्तितो दद्याद्वित्तशाठ्यं विवर्जयेत् । भूमिवाजिहयदानैर्वार्यं परितोषयेत् ॥ वेदपारायणान्ते च ब्राह्मणान् भोजयेत्तत: । दशमष्टोत्तरं चैव पञ्चाशद्विंशतिर्दश ॥ श्रुत्वा पारायणं सम्यक् ऋग्वेदस्य द्विजातय: । दीर्घायुष: सुखं भुक्त्वा ब्रह्मलोकमवाप्नुयु: ॥ यजुर्वेदस्य पूर्णं तु पारायणमतन्द्रित: । शृणुयाद् यो द्विज: श्रेष्ठ: सधनो भवति ध्रुवम् ॥ वेदानामुत्तमं वेदं सामं श्रुत्वा द्विजोत्तम: । नि:कल्मषसुखं भुक्त्वा विष्णुलोके महीयते ॥ पुत्रार्थी तु विशेषेण श्रुत्वा वेदमथर्वणम् । अवश्यं लभते पुत्रं दीर्घायुषमनामयम् ॥ एवं य: पारयेद्वेदं यथावत्प्रयतो द्विज: । पुत्री धनी च दीर्घायुर्भूत्वा मोक्षमवाप्नुयात् ॥ इति ।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(अथर्वपरिशिष्टोक्त वेदपारायणविधानम्)

अत: परं प्रवक्ष्यामि वेदपारायणं विधिम् । पारायणे कृते तार्क्ष्य स राजा जायते भुवि ॥ पुरीं द्वारावतीं गच्छेत् पारायणं तथाश्विने । न तेषां पुनरावृत्तिर्गर्भवासं गतो भवेत् ॥ तपः परं कृतयुगे त्रेतायां ज्ञानमेव च । द्वापरे चाध्वर: प्रोक्त: कलौ पारायणं युगे ॥ धर्मार्थकाममोक्षं च लभते नात्र संशयः । सर्वतीर्थाधिकं दानं सर्वदानान्न संशय: ॥ दानेन यद् भवेद् पुण्यं यच्चाश्विने श्रुति: श्रुता । अकृत्वा यदि मृत्यु: स्यात्पापं गच्छति दारुणम् ॥ न तेषां शुध्यते पापं पारायणं विना नृणम् । पारायणं कृतं यैस्तु मुक्तिं प्राप्य चतुर्विधाम् ॥ यथा सर्वत्र धातूनां दोषं दहति पावक:। एवमन्तर्गतं पाप पारायणेन दह्यते ॥ ब्रह्महा च सुरापी च गुरुतल्पग एव च । सुवर्णस्तेयी चौरश्च ये च विश्वासघातका:॥ शरणागतघाती च कूटसाक्षी ह्यकार्यकृत् । एवमादिषु चान्येषु लिप्यन्ते पातकैर्नरा: ॥ विशुद्धये सदा कुर्यात् पारायणं तथाश्विने । निर्मला: स्वर्गमायान्ति सन्त: सुकृतिनो यथा ॥ मानसं वाचिकं पापं कायेनैव च यत्कृतम् । सर्वमन्तर्गतं पापं दहेत्पारायणं तथा ॥ त्वङ्नासास्थितं पापं देहे तिष्ठति मानुषे । ब्रह्मकूर्चपुनस्सर्वं दहते वह्निकाष्ठवत् ॥ अश्वमेधसहस्राणि राजसूयशतानि च । गवां कोटिप्रदानेन फलं पारायणं कृते ॥ त्रिरावृत्पृथिवी ज्ञेया दानं तत्फलमश्नुते । तद् नं चैव पारणं लभते च पुन: पुन: ॥ गजाश्वरथदानानि हेमभारशतानि च । गवां कोटिप्रदानेन दिनेनैकेन तत्फलम् ॥ गङ्गागयाकुरुक्षेत्रे प्रयागे यत्फल लभेत् । तत्फलं प्राप्यते यत्तु आश्विनस्य दिने दिने । तोलयित्वा हेमयुक्तं द्वादशसंख्यया बुध: ॥ दत्वा यत्फलमाप्नोति कुरुक्षेत्रैकपर्वणि । तत्पुण्यमाश्विने यत्तु तत्प्राप्नोत्यसंशय: ॥ देवालये गृहे वापि पुण्यतीर्थे शिवालये । स्थापयेद्वरण कुंभं सवस्त्रं फलसंयुतम् ॥ ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च गणेशेनाम्बिका तथा । ब्रह्मकूर्चं चतुर्वेदाः कलशे स्थापयेत् द्विज: ॥ कलशोक्तविधानेन प्रतिष्ठां तत्र कारयेत् । वरणं ब्राह्मणानां च पदं गां च सुवर्णकम् ॥ पलमेकं सुवर्णस्य दक्षिणाहीनं निष्फलम् । तस्मादेतत्प्रदातव्यं वित्तशाठ्यं च वर्जयेत् ॥ पूजा तत्र प्रकर्तव्या धूपदीपैर्दिने दिने । फलमर्घ्यं च नैवेद्यमारार्तिकं दिने दिने ॥ एवं माघादिचैत्रेषु वेदपारायणं कुरु । नर्मदातीर्थमाश्रित्य कुंभेश्वरे विशेषत: ॥ यत्फलमाश्विने मासि तत्फलं माघचैत्रके । पठित्वा चतुरो वेदान् स्वशाखां चैव कारयेत् ॥ मार्कण्डेयपुराणं च पठित्वा तु यथाविधि । पुष्पधूपादिवस्त्रैश्च नैवेद्येन तत: फलै: ॥ विप्राणां भोजनैर्होमै: कर्तव्यं च सदा द्विजै: । ब्राह्मण:

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

अथ पद-क्रम-विकृतिनिर्देशः

महामहोपाध्याय श्रीपण्डित विद्याधरशास्त्रिपुत्र
श्रीदौलतरामगौड द्वारा संशोधित ।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

❋ अथ पदानि ❋

ओ३म् । इषे । त्वा । ऊर्जे । त्वा । वायवः । स्थ ।
देवः । वः । सविता । प्र । अर्प्पयतु । श्रेष्ठतमायेति श्रेष्ठ
तमाय । कर्म्मणे । आ । प्यायध्वम् । अघ्न्याः । इन्द्रा
य । भागम् । प्रजावतीरिति प्रजावतीः । अनमीवाः ।
अयक्ष्माः । मा । वः । स्तेनः । ईशत । मा । अघशंसः
सऽइत्यघ शंसः । ध्रुवाः । अस्मिन् । गोपताविति गो पतौ ।

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

स्यात् । बर्हीः । यजमानस्य । पशून् । पाहि ॥ १ ॥

❋ अथ क्रमः ❋

ओ३म् । इषे त्वा । त्वोर्ज्जे । ऊर्ज्जे त्वा । त्वा वायवः । वायवस्त्थ । स्त्थदेवः । देवो वः । वस्सविता । सविता प्र । प्रार्प्पयतु । अर्प्पयतु श्रेष्ठतमाय । श्रेष्ठतमाय कर्म्मणे । श्रेष्ठतमायेति श्रेष्ठ।तमाय । कर्म्मणऽआप्यायद्ध्वम् । आप्यायद्ध्वम् । प्यायद्ध्वमघ्न्याः । अघ्न्याऽ इन्द्राय । इन्द्राय

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

भागम् । भागं प्रजावंतीः । प्रजावंतीरनमीवाः । प्रजावंतीरिति
प्रजा वंतीः । अनमीवा ऽअंयक्ष्माः । अयक्ष्मा मा । मा
वंः । वस्तेनः । स्तेन ऽईंशत । ईंशत मा । माघशंꣳसः ।
अघशंꣳसोद्ध्रुवाः । अघशंꣳसइत्यघ शंꣳसः । ध्रुवा ऽअस्मिन
न् । अस्मिन्गोपंतौ । गोपंतौ स्यात । गोपंताविंतिगो । पंतौ ।
स्यात बह्वीः । बह्वीर्यजंमानस्य । यजंमानस्य पशून् ।
पशून्पांहि । पाहीतिंपाहि ॥ १ ॥

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

❋ अथ जटा ❋

ओ३म्। त्र्यंम्बकं यजामहे यजामहे त्र्यम्बकं त्र्यम्बकं यजा
महे। त्र्यंम्बकमिति त्रिऽअंम्बकम्। यजामहे सुगन्धिꣳ सुंगन्धिं
यंजामहे यजामहे सुगन्धिम्। सुगन्धिं पुंष्टिवर्द्धनं पुष्टिवर्द्धनꣳ सु
गन्धिꣳ सुंगन्धिं पुंष्टिवर्द्धनम्। सुगन्धिमिति सुऽगन्धिम्। पुष्टि
वर्द्धनमिति पुष्टिऽवर्द्धनम्॥ उर्वारुकमिंव बन्धंनात् बन्धंनादुर्वा
रुकमिंवोर्वारुकमिंव बन्धंनात्। उर्वारुकमिवेत्युर्वारुकम्ऽ

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

इ॒व । बन्ध॑नान्मृ॒त्योर्मृ॒त्योर्बन्ध॑नाद्बन्ध॑नान्मृ॒त्योः । मृ॒त्यो
र्मु॑क्षीयमुक्षीयमृ॒त्योर्मृ॒त्योर्मु॑क्षीय । मु॒क्षी॒य॒मामामु॑क्षीयमुक्षी
य॒मा । माम॒ताद॒मृता॒न्मामामृता॑त् । अ॒मृता॒दित्य॒मृता॑त् ॥
प॒ति॒वेद॑नमि॒तऽइ॒तः प॑ति॒वेद॑नं पति॒वेद॑नमि॒तः । प॒ति॒वेद॑न॒मिति
प॒ति॒ऽवेद॑नम् । इ॒तो मु॑क्षीयमुक्षीये॒तऽइ॒तो मु॑क्षीय । मु॒क्षी॒य॒मा
मामु॑क्षीयमुक्षी॒य॒मा । माम॒मु॒तो॒मु॒तो॒मामामुतः॑ । अ॒मु॒तऽइत्य॒
मु॒तः॑ ॥ १ ॥ पुन॑स्त्वात्वा॒पुन॒ᳬपुन॑स्त्वा । पुन॒रिति॒पुनः॑ । त्वा

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

दित्याऽआंदित्यास्त्वात्वादित्याः । आदित्यारुद्रारुद्राऽआं
दित्याऽआंदित्यारुद्राः । रुद्राव्वसंवोव्वसंवोरुद्रारुद्राव्वसंवः ।
व्वसंवः सᳪं संव्वसंवोव्वसंवःसम् । समिन्धतामिन्धताᳪंसᳪंस
मिन्धताम् । इन्धतांपुनः पुनरिन्धतामिन्धतांपुनः । पुनर्ब्र
ह्माणोब्रह्माणः पुनः पुनर्ब्रह्माणः । ब्रह्माणोव्वसुनीथव्वसुनीथ
ब्रह्माणोब्रह्माणोव्वसुनीथ । व्वसुनीथयज्ञैर्यज्ञैर्व्वसुनीथव्वसुनीथ
यज्ञैः । व्वसुनीथेतिवसुऽनीथ । यज्ञैरितियज्ञैः ॥ घृतेनत्वंत्व

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

ङ्कृतेनं घृतेनु त्वम् । त्वन्तुन्वंतुन्वंत्वंत्वन्तुन्वम् । तुन्वंवर्द्धयस्व
वर्द्धस्वतुन्वन्तुन्वंवर्द्धयस्व । वर्द्धयस्वसत्याश्सत्यावर्द्धयस्ववर्
द्धयस्वसत्याः । सत्याश्संन्तुसन्तुसत्याःसत्याःसंन्तु । सन्तु
यजंमानस्ययजंमानस्यसन्तुसन्तुयजंमानस्य । यजंमानस्य
कामाःकामायजंमानस्ययजंमानस्यकामाः । कामाऽइति
कामाः ॥ २ ॥

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

❋ अथ क्रममाला ❋

यज्ञेनंयज्ञम् । आसन्नित्यांसन् । यज्ञमंयजन्त । आसन्प्रथमानि । अयजन्तदेवाः । प्रथमानिधर्म्माणि । देवास्तानि । धर्म्माणितानि । तानिधर्म्माणि । तानिदेवाः । धर्म्माणिप्रथमानि । देवाऽअंयजन्त । प्रथमान्यासन् । अयजन्तयज्ञम् । आसन्नित्यांसन् । यज्ञंयज्ञेनं ॥ तेहं । देवाऽइतिदेवाः । हनाकम् । देवाःसन्ति । नाकंमहिमानंः । सन्तिसाध्याः । महि

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

मानं÷सचन्त । साध्याश्पूर्वे । सचन्तयत्रं । पूर्वेयत्रं । यत्र पूर्वे । यत्रंसचन्त । पूर्वेसाध्याः । सचन्तमहिमानं÷ । साध्याः सन्ति । महिमानोनाकम् । सन्तिदेवाः । नाकꣳह । देवाऽ इतिदेवाः । हते ॥ १ ॥

❋ अथ पुष्पमाला ❋

परीत्यंभूतानि । भूतानिपरीत्यं । परीत्यंभूतानि । परीत्येतिपरीऽइत्यं । भूतानिपरीत्यं । परीत्यंभूतानि । भूतानिपरी

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

त्यं । परीत्यंल्लोकान् । लोकान्परीत्य । परीत्यंल्लोकान् ।
परीत्येतिपरीऽइत्यं । लोकान्परीत्यं । परीत्यंल्लोकान् । लोका
न्परीत्यं । परीत्यसर्व्वाँ÷ । सर्व्वाँ÷परीत्यं । परीत्यसर्व्वाँ÷ ।
परीत्येतिपरीऽइत्यं । सर्व्वाँ÷प्रदिशं÷ । प्रदिशःसर्व्वाँ÷ । स
र्व्वाँ÷प्रदिशं÷ । प्रदिशोदिशं÷ । दिशं÷प्रदिशं÷ । प्रदिशोदि
शं÷ । प्रदिशऽइतिप्रऽदिशं÷ । दिशंश्च । चदिशं÷ । दिशंश्च
चेतिच ॥ उपस्थायंप्प्रथमजाम् । प्रथमजामुपस्थायं । उप

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

स्थायं॑प्रथम॒जाम्। उप॒स्थायेत्यु॑प॒ऽस्थाय॑। प्र॒थ॒म॒जामृ॒तस्य॑।
ऋ॒तस्य॑प्रथम॒जाम्। प्र॒थ॒म॒जामृ॒तस्य॑। प्र॒थ॒म॒जामिति॑प्रथम॒
ऽजाम्। ऋ॒तस्या॒त्मना॑। आ॒त्मनं॑ऽऋ॒तस्य॑। ऋ॒तस्या॒त्मना॑।
आ॒त्मना॒त्मानं॑म्। आ॒त्मानं॑मा॒त्मना॑। आ॒त्मना॒त्मानं॑म्।
आ॒त्मानं॑म॒भि। अ॒भ्या॒त्मानं॑म्। आ॒त्मानं॑म॒भि। अ॒भिसम्।
सम॒भि। अ॒भिसम्। सं॑वि॑वेश। वि॒वे॒श॒सम्। सं॑वि॑वेश।
वि॒वे॒शेति॑विवेश ॥ १ ॥

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

❋ अथ पञ्चसन्धी ❋

बण्महान् । महान्महान् । महान्बट् । बट्बट् बण्महान् । महाँऽऽअंसि । अस्यसि । असिमहान् । महान्महान् । महाँऽऽअंसि । असिसुर्य्य । सुर्य्यसुर्य्य । सुर्य्यासि । अस्यसि । असिसुर्य्य । सुर्य्यबट् । बट्बट् । बट्सुंर्य्य । सुर्य्य सुर्य्य । सुर्य्यबट् । बडादित्य । आदित्यादित्य । आदित्य बट् । बट्बट् । बडादित्य । आदित्यमहान् । महान्महान् ।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

म॒हानां॑दि॒त्य । आ॒दि॒त्या॒दि॒त्य॒ । आ॒दि॒त्य॒म॒हा॒न् । म॒हाँ२॥ऽ
अंसि । अ॒स्य॒सि॒ । अ॒सि॒म॒हा॒न् । म॒हान्म॒हा॒न् । म॒हाँ२॥ऽअंसि ।
अ॒सीत्यंसी ॥ म॒हस्तैं । ते॒ते॒ । ते॒म॒हः॒ । म॒हो॒म॒हः॒ । म॒हस्तैं ।
ते॒स॒तः॒ । स॒तः॒स॒तः॒ । स॒तस्तैं । ते॒ते॒ । ते॒स॒तः॒ । स॒तोमं॑हि॒मा ।
म॒हि॒मा॒मं॑हि॒मा । म॒हि॒मा॒स॒तः॒ । स॒तः॒स॒तः॒ । स॒तोमं॑हि॒मा ।
म॒हि॒मापं॑नस्यते । प॒न॒स्य॒ते॒प॒न॒स्य॒ते॒ । प॒न॒स्य॒ते॒म॒हि॒मा ।
म॒हि॒मा॒मं॑हि॒मा । म॒हि॒मापं॑नस्यते । प॒न॒स्य॒ते॒द्धा । अ॒द्धा॒द्धा ।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

अद्धापंनस्यते । पनस्यतेपनस्यते । पनस्यतेद्धा । अद्धादेव । देवदेव । देवाद्धा । अद्धाद्धा । अद्धादेव । देवमहान् । महान्महान् । महान्देव । देवदेव । देवमहान् । महाँ२ऽअंसि । अस्यसि । असिमहान् । महान्महान् । महाँ२ऽअंसि । असीत्यंसि ॥ १ ॥

❁ अथ शिखा ❁

श्रीश्चंचश्रीश्श्रीश्चंते । चतेतेचचतेलक्ष्मीः । तेलक्ष्मीर्लक्ष्मी

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

स्तैतेलक्ष्मीश्चं । लक्ष्मीश्चंचलक्ष्मीर्लक्ष्मीश्चपत्न्यौ । चपत्न्यौ
पत्न्यौचचपत्न्यावहोरात्रे । पत्न्यावहोरात्रेऽअहोरात्रेपत्न्यौ
पत्न्यावहोरात्रेपार्श्वे । अहोरात्रेपार्श्वेपार्श्वेऽअहोरात्रेऽअहोरात्रे
पार्श्वेनक्षत्राणि । अहोरात्रेऽइत्यहोरात्रे । पार्श्वेनक्षत्राणि
नक्षत्राणिपार्श्वेपार्श्वेनक्षत्राणिरूपम् । पार्श्वेऽइतिपार्श्वे । नक्षत्रा
णिरूपꣳरूपन्नक्षत्राणिनक्षत्राणिरूपमश्विनौ । रूपमश्विना
वश्विनौरूपꣳरूपमश्विनौव्यात्तम् । अश्विनौव्यात्तंव्यात्तम्

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

श्विना॑व॒श्विनौ॒व्यात्त॑म् । व्यात्त॒मिति॑वि॒ऽआत्त॑म् ॥ इ॒ष्णन्
न्नि॑षाणे॒षाणे॒ष्णन्नि॒ष्णन्नि॑षाणा॒मुम् । इ॒षा॒णा॒मु॒म॒मु॒मि॑षाणे
षाणा॒मुम्मे॑ । अ॒मुम्मे॑मे॒मु॒म॒मुम्मं॑ऽइषाण । म॒ऽइ॒षा॒णे॒षा॒णमे॒
म॒ऽइ॒षा॒ण॒स॒र्व्व॒लो॒कम् । इ॒षा॒ण॒स॒र्व्व॒लो॒कꣳस॑र्व्वलो॒का॑मिषाणेषा
णसर्व्वलो॒कम्मे॑ । स॒र्व्व॒लो॒कम्मे॑मेसर्व्वलो॒कꣳस॑र्व्वलो॒कम्मं॑ऽइषा
ण । स॒र्व्व॒लो॒कमिति॑सर्व्वऽलो॒कम् । म॒ऽइ॒षा॒णे॒षा॒णमे॒म॒ऽइ॒षा॒
ण॒ । इ॒षा॒णेती॑षाण ॥ १ ॥

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.
CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

❋ अथ रेखा ❋

बृहंस्पतेपरिं । परिबृहंस्पते । बृहंस्पतेपरिं । परिंदीयार
थेंन । रथेंनदीयपरिं । परिंदीय । दीयारथेंन । रथेंनरक्षोहा
मित्राँ२ऽअपबाधंमानः । अपबाधंमानोमित्रांन्रक्षोहारथेंन ।
रथेंनरक्षोहा । रक्षोहामित्रांन् । रक्षोहेतिरक्षःऽहा । अमि
त्राँ२ऽअपबाधंमानः । अपबाधंमानऽइत्यंपऽबाधंमानः ॥
प्रभञ्जन्त्सेनांःप्रमृणोयुधाजयंन् । जयंन्युधाप्रंमृणःसेनांः

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

प्रभुञ्जन् । प्रभुञ्जन्नितिप्रऽभुञ्जन् । सेनाः॑प्रमृणः । प्रमृणो युधा । प्रमृणऽइतिप्रऽमृणः । युधाजयंन् । जयंन्नस्माकंमे ध्यवितारथांनाम् । रथांनामवितैध्यस्माकञ्जयंन् । जयंन्नस्मा कंम् । अस्माकंमेधि । एध्यविता । अवितारथांनाम् । रथां नामितिरथांनाम् ॥ १ ॥

❋ अथ ध्वज ❋

बृहंस्पतेपरिं । रथांनामितिरथांनाम् । परिंदीय । अविता

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

प. सं. रथानाम् । द्वीयपरि । एध्यविता । रथेनरक्षोहा । अस्माकं
॥२०॥ मेधि । रक्षोहामित्रान् । जयन्नस्माकम् । रक्षोहेतिरक्षःऽहा । विकृति.
सुधाजयन् । अमित्राँ२ऽअपबाधमानः । प्रमृणोसुधा । प्रभ
ञ्जन्त्सेनाः । सेनाःप्रमृणः । प्रभञ्जन्नितिप्रऽभञ्जन् । सेनाःप्र
मृणः । प्रभञ्जन्त्सेनाःप्रमृणोसुधा । अपबाधमानऽइत्यपऽ
बाधमानः । प्रमृणऽइतिप्रऽमृणः । अमित्राँ२ऽअपबाधमा
नः । सुधाजयन् । रक्षोहेतिरक्षःऽहा । जयन्नस्माकम् । रक्षो ॥१०॥

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

हामित्रांन् । अस्माकंमेधि । रथैंनरक्षोहा । एध्यविता । दी यारथैंन । अवितारथांनाम् । परिंदीय । रथांनामितिरथांना म् । बृहंस्पतेपरिं ॥ १ ॥

* अथ दण्ड *

ताऽउभौ । उभौतौ । ताऽउभौ । उभौचतुरंः । चतुरंऽउ भौतौ । ताऽउभौ । उभौचतुरंः । चतुरंःपदः । पदश्चतुरंऽ उभौतौ । ताऽउभौ । उभौचतुरंः । चतुरंःपदः । पदःसम्म

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

सांरयाव । सुम्प्रसांरयावपुदश्चतुरंऽउभौतौ । ताऽउभौ । उभौ
चतुरं÷ । चतुरं÷पुदः॒ । पुदः॒सुम्प्रसांरयाव । सुम्प्रसांरयाव
स्वुर्ग्गौ । स्वुर्ग्गौसुम्प्रसांरयावपुदश्चतुरंऽउभौतौ । ताऽउभौ ।
उभौचतुरं÷ । चतुरं÷पुदः॒ । पुदः॒सुम्प्रसांरयाव । सुम्प्रसारं
यावस्वुर्ग्गौ । सुम्प्रसांरयावेतिंसुम्ऽप्रसांरयाव । स्वुर्ग्गौलोके ।
लोकेस्वुर्ग्गौसुम्प्रसांरयावपुदश्चतुरंऽउभौतौ । ताऽउभौ । उभौ
चतुरं÷ । चतुरं÷पुदः॒ । पुदः॒सुम्प्रसारंयाव । सुम्प्रसांरयाव ॥११॥

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

स्वुर्ग्गे । सुम्प्रसा॑र्या॒वेति॑सुम्ऽप्रसा॑र्याव । स्वुर्ग्गेल्लो॒के । स्व॒
र्ग॑ऽइति॑स्वु॒ऽगे । लो॒केप्र । प्रलो॒केस्वुर्ग्गेसुम्प्रसा॑र्यावप॒दश्च॒तु
रं॑ऽउ॒भौतौ । ताऽउ॒भौ । उ॒भौच॒तुरं॑÷ । च॒तुरं॑÷प॒दः॑ । प॒दःसु॒
म्प्रसा॑र्याव । सुम्प्रसा॑र्यावस्वुर्ग्गे । सुम्प्रसा॑र्या॒वेति॑सुम्ऽप्रसा॑
र्याव । स्वुर्ग्गेल्लो॒के । स्वुर्ग॑ऽइति॑स्वु॒ऽगे । लो॒केप्र । प्रोर्ण्णु॑वा
थाम् । ऊर्ण्णु॑वा॒थाम्प्रलो॒केस्वुर्ग्गेसुम्प्रसा॑र्यावप॒दश्च॒तुरं॑ऽउ॒भौ
तौ । ताऽउ॒भौ । उ॒भौच॒तुरं॑÷ । च॒तुरं॑÷प॒दः॑ । प॒दःसुम्प्रसा॑र्या

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

व । सुम्प्रसा॑रयावस्वुर्ग्गे । सुम्प्रसा॑रयावेतिसम्ऽप्रसा॑रयाव ।
स्वुर्ग्गेलो॒के । स्वुर्ग्गऽइतिस्वुःऽगे । लो॒केप्र । प्रोण्णु॑वाथाम् ।
ऊ॒र्णु॑वा॒था॑वृषा॑ । वृषो॒र्णु॑वाथा॒म्प्रलो॒केस्वुर्ग्गेसुम्प्रसा॑रयावपुद
श्च॒तु॑र॑ऽउभौतौ । ताऽउभौ । उभौचुतुर॑÷ । चुतुर॑÷पुदः॒ । पुदः॒
सुम्प्रसा॑रयाव । सुम्प्रसा॑रयावस्वुर्ग्गे । सुम्प्रसा॑रयावेतिसुम्ऽप्र
सा॑रयाव । स्वुर्ग्गेलो॒के । स्वुर्ग्गऽइतिस्वुःऽगे । लो॒केप्र । प्रोण्णु॑
वाथाम् । ऊ॒र्णु॑वा॒था॑वृषा॑ । वृषा॑वाजी । वाजीवृषो॒र्णु॑वाथा ॥१२॥

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

म्प्रलोकेस्वर्ग्गेसम्प्रसारयावपदश्चतुरंऽउभौतौ । ताऽउभौ । उ
भौचतुरं÷ । चतुरं÷पदः । पदःसम्प्रसारयाव । सम्प्रसारया
वस्वर्ग्गे । सम्प्रसारयावेतिसम्ऽप्रसारयाव । स्वर्ग्गेलोके । स्व
र्ग्गऽइतिस्वःऽगे । लोकेप्र । प्रोर्णुवाथाम् । ऊर्णुवाथांवृषा ।
वृषांवाजी । वाजीरेतोधाः । रेतोधावाजीवृषोर्णुवाथाम्प्रलो
केस्वर्ग्गेसम्प्रसारयावपदश्चतुरंऽउभौतौ । ताऽउभौ । उभौच
तुरं÷ । चतुरं÷पदः । पदःसम्प्रसारयाव । सम्प्रसारयावस्व

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

ग्गें । सुम्प्रसांरयावेतिसम्ऽप्रसांरयाव । स्वर्ग्गेंलोके । स्वर्ग्गऽ
इतिस्वःऽगे । लोकेप्र । प्रोर्णुवाथाम् । ऊर्णुवाथांवृषा । वृ
षांवाजी । वाजीरेतोधाः । रेतोधारेतः । रेतोरेतोधावाजी
वृषोर्णुवाथाम्प्रलोकेस्वर्ग्गेसुम्प्रसांरयावपद्श्चतुरंऽउभौतौ ।
ताऽउभौ । उभौचतुरः । चतुरःपदः । पदःसुम्प्रसांरयाव ।
सम्प्रसांरयावस्वर्ग्गे । सुम्प्रसांरयावेतिसम्ऽप्रसांरयाव । स्वर्ग्गे
लोके । स्वर्ग्गऽइतिस्वःऽगे । लोकेप्र । प्रोर्णुवाथाम् । ऊर्णु

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

वाथांवृषा । वृषावाजी । वाजीरेतोधाः । रेतोधारेतः ।
रेतोधाऽइतिरेतःऽधाः । रेतोदधातु । दधातुरेतोरेतोधावाजी
वृषोर्ण्णवाथाम्प्रलोकेस्वर्ग्गेसम्प्रसारयावपदश्चतुरऽउभौतौ ।
ताऽउभौ । उभौचतुरः । चतुरःपदः । पदःसम्प्रसारयाव ।
सम्प्रसारयावस्वर्ग्गे । सम्प्रसारयावेतिसम्ऽप्रसारयाव । स्वर्ग्गे
लोके । स्वर्ग्गऽइतिस्वःऽगे । लोकेप्र । प्रोर्ण्णवाथाम् । ऊ
र्ण्णवाथांवृषा । वृषावाजी । वाजीरेतोधाः । रेतोधारेतः ।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

रेतोधाऽइतिरेतःऽधाः । रेतोदधातु । दधात्वितिदधातु ॥ १ ॥

❋ अथ चतुष्पाद्रथः ❋

स्वस्तिनः । स्वस्तिनः । स्वस्तिनः । स्वस्तिनः । नः स्वस्ति । नःस्वस्ति । नःस्वस्ति । नःस्वस्ति । स्वस्तिनः । स्वस्तिनः । स्वस्तिनः । स्वस्तिनः । नऽइन्द्रः । नःपूषा । नस्तार्क्ष्यः । नोबृहस्पतिः । इन्द्रोनःस्वस्ति । पूषानःस्वस्ति । तार्क्ष्योनःस्वस्ति । बृहस्पतिर्नःस्वस्ति । स्व

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

स्तिनं÷। स्वुस्तिनं÷। स्वुस्तिनं÷। स्वुस्तिनं÷। नुऽइन्द्रं÷।
नुःपूषा। नुस्ताक्ष्यं÷। नोबृहुस्पतिं÷। इन्द्रोवृद्धश्रंवाः।
पूषाविश्ववैदाः। ताक्ष्योंऽअरिष्टनेमिः। बृहुस्पतिर्दधातु। वृद्ध
श्रंवाऽइन्द्रोनःस्वुस्ति। विश्ववैदाःपूषानं÷स्वुस्ति। अरिष्टने
मिस्ताक्ष्योंनःस्वुस्ति। दुधातुबृहुस्पतिर्नःस्वुस्ति। स्वुस्ति
नं÷। स्वुस्तिनं÷। स्वुस्तिनं÷। स्वुस्तिनं÷। नुऽइन्द्रं÷।
नुःपूषा। नुस्ताक्ष्यं÷। नोबृहुस्पतिं÷। इन्द्रोवृद्धश्रंवाः।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

पूषाव्विश्ववेदाः । तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः । बृहस्पतिर्दधातु । वृद्धश्रवाऽइतिवृद्धऽश्रवाः । व्विश्ववेदाऽइतिविश्वऽवेदाः । अरिष्टनेमिरित्यरिष्टऽनेमिः । दधात्वितिदधातु ॥ १ ॥

❋ अथ द्विपाद्रथः ❋

अनिशितोसि । अनिशितासि । अस्यनिशितः । अस्यनिशिता । अनिशितोसि । अनिशितासि । अनिशितऽइत्यनिशितः । अनिशितेत्यनिऽशिता । असिसपत्नक्षित् । असि

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

सपत्नाक्षित् । सपत्नाक्षिदुस्यनिंशितः । सपत्नाक्षिदुस्यनिंशि
ता । अनिंशितोसि । अनिंशितासि । अनिंशितइत्यनिंऽशि
तः । अनिंशितेत्यनिंऽशिता । असिसपत्नाक्षित् । असिसपत्ना
क्षित् । सपत्नाक्षिद्वाजिनंम् । सपत्नाक्षिद्वाजिनीम् । वाजिनंः
सपत्नाक्षिदुस्यनिंशितः । वाजिनीᳬं तपत्नाक्षिदुस्यनिंशिता ।
अनिंशितोसि । अनिंशितासि । अनिंशितऽइत्यनिंऽशितः ।
अनिंशितेत्यनिंऽशिता । असिसपत्नाक्षित् । असिसपत्नाक्षि

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

तु । सुपत्नुक्षिद्वाजिनंम् । सपत्नाक्षिद्वाजिनींम् । सुपत्नाक्षि
दितिसपत्नऽक्षित् । सुपत्नाक्षिदितिसपत्नऽक्षित् । वाजिनं
न्त्वा । वाजिनीन्त्वा । त्वावाजिनंꣳसपत्नाक्षिदुस्यनिंशितः ।
त्वावाजिनीꣳसपत्नाक्षिदुस्यनिंशिता । अनिंशितोसि । अ
निंशितासि । अनिंशितऽइत्यनिंऽशितः । अनिंशितेत्यनिंऽ
शिता । असिसपत्नाक्षित् । असिसपत्नाक्षित् । सुपत्नाक्षिद्वा
जिनंम् । सुपत्नाक्षिद्वाजिनींम् । सपत्नाक्षिदितिसपत्नऽक्षित् । ॥१६॥

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

सपत्नक्षिदितिसपत्नऽक्षित् । वाजिनन्त्वा । वाजिनीन्त्वा ।
त्वावाजेध्यायै । त्वावाजेध्यायै । वाजेध्यायैत्वावाजिनꣳस
पत्नक्षिदुस्यानिशितं । वाजेध्यायैत्वावाजिनीꣳसपत्नक्षिदु
स्यानिशिता । अनिशितोसि । अनिशितासि । अनिशितऽइ
त्यनिऽशितः । अनिशितेत्यनिऽशिता । असिसपत्नक्षित् ।
असिसपत्नक्षित् । सपत्नक्षिद्वाजिनम् । सपत्नक्षिद्वाजिनी
म् । सपत्नक्षिदितिसपत्नऽक्षित् । सपत्नक्षिदितिसपत्नऽक्षि

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

त् । व्वाजिनंन्त्वा । व्वाजिनींन्त्वा । त्वाव्वाजेध्यायै । त्वाव्वा
जेध्यायै । व्वाजेध्यायैसम् । व्वाजेध्यायैसम् ॥ संव्वांजेध्यायै
त्वाव्वाजिनंꣳसपत्नाक्षिदुस्यानिंशितꣳ । संव्वांजेध्यायैत्वाव्वाजि
नीꣳसपत्नाक्षिदुस्यानिंशिता । अनिंशितोसि । अनिंशिता
सि । अनिंशितऽइत्यनिंऽशितꣳ । अनिंशितेत्यनींऽशिता ।
असिसपत्नाक्षित् । असिसपत्नाक्षित् । सपत्नाक्षिद्वाजिनंम् ।
सपत्नाक्षिद्वाजिनीम् । सपत्नाक्षिदितिसपत्नऽक्षित् । सपत्न ॥१७॥

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

क्षि॒दि॒तिंसप॑त्नुऽक्षित् । व्वा॒जिनं॑न्त्वा । व्वा॒जिनी॑न्त्वा । त्वा॒व्वा॒
जे॒ध्यायै॑ । त्वा॒व्वा॒जे॒ध्यायै॑ । व्वा॒जे॒ध्यायै॒सम् । व्वा॒जे॒ध्यायै॒
सम् । व्वा॒जे॒ध्याया॒ऽइतिंवाजऽइ॒ध्यायै॑ । व्वा॒जे॒ध्याया॒ऽइतिंवा
जऽइ॒ध्यायै॑ । सं॒मा॑र्ज्मि । सं॒मा॑र्ज्मि । मा॒र्ज्मि॒संव्वा॑जे॒ध्यायै॑
त्वा॒व्वा॒जिनं॑ꣳसप॑त्ना॒क्षिदु॒स्यानि॑शि॒तः॑ । मा॒र्ज्मि॒संव्वा॑जे॒ध्यायै॑
त्वा॒व्वा॒जिनी॑ꣳसप॑त्ना॒क्षिदु॒स्यानि॑शि॒ता । अनि॑शि॒तो॑सि । अ
नि॑शि॒ता॑सि । अनि॑शि॒तु॒ऽइत्यानि॑शि॒तः॑ । अनि॑शि॒ते॒त्यनी॑ऽ

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

शिता । असिसपत्नक्षित् । असिसपत्नक्षित् । सपत्नक्षिद्वा
जिनम् । सपत्नक्षिद्वाजिनीम् । सपत्नक्षिदितिसपत्नऽक्षित् ।
सपत्नक्षिदितिसपत्नऽक्षित् । वाजिनंन्त्वा । वाजिनीन्त्वा ।
त्वावाजेध्यायै । त्वावाजेध्यायै । वाजेध्यायैसम् । वाजेध्या
यैसम् । वाजेध्यायाऽइतिवाजऽइध्यायै । वाजेध्यायाऽइति
वाजऽइध्यायै । संमार्ज्मि । संमार्ज्मि । मार्ज्मीतिमार्ज्मि ।
मार्ज्मीतिमार्ज्मि ॥ १ ॥

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

* अथ द्वितीयः प्रकारो घनः *

गुणानांन्त्वात्वागुणानांङ्गुणानांन्त्वागुणपंतिङ्गुणपंतिन्त्वा गुणानांङ्गुणानांन्त्वागुणपंतिम् ॥ त्वागुणपंतिङ्गुणपंतिन्त्वा त्वागुणपंतिᳬहवामहेहवामहेगुणपंतिन्त्वागुणपंतिᳬहवामहे । गुणपंतिᳬहवामहेहवामहेगुणपंतिङ्गुणपंतिᳬहवामहेप्रियाणां प्रियाणांᳬहवामहेगुणपंतिङ्गुणपंतिᳬहवामहेप्रियाणांम् । गुणपंतिमितिगणऽपंतिम् । हवामहेप्रियाणांप्रियाणांᳬहवामहे

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

हवामहे प्रियाणाम्प्रियपतिम्प्रियपतिम्प्रियाणाꣳ हवामहे हवामहे
प्रियाणाम्प्रियपतिम् । प्रियाणाम्प्रियपतिम्प्रियपतिम्प्रियाणाम्प्रिया
णाम्प्रियपतिन्निधीनान्निधीनाम्प्रियपतिम्प्रियाणाम्प्रियाणाम्प्रियप
तिन्निधीनाम् । प्रियपतिन्निधीनान्निधीनाम्प्रियपतिम्प्रियपतिन्नि
धीनान्निधिपतिन्निधिपतिन्निधीनाम्प्रियपतिम्प्रियपतिन्निधीना
न्निधिपतिम् । प्रियपतिमितिप्रियऽपतिम् । निधीनान्निधिपति
न्निधिपतिन्निधीनान्निधीनान्निधीपतिंवसोवसोनिधीपतिन्निधी

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

नान्निधीनान्निधिपतिंव्वसो । निधीनामितिनीऽधीनाम् । नि
धिपतिंव्वसोव्वसोनिधिपतिन्निधिपतिंव्वसोममममव्वसोनिधिप
तिन्निधिपतिंव्वसोमम । निधिपतिमितिनिधीऽपतिम् । व्वसोम
ममव्वसोव्वसोमम । व्वसोऽइतिवसो । ममेतिमम ॥ आहम
हमाहमंजान्यजान्यहमाहमंजानि । अहमंजान्यजान्यहम
हमंजानिगर्भधङ्गर्भधमंजान्यहमहमंजानिगर्भधम् । अजा
निगर्भधङ्गर्भधमंजान्यजानिगर्भधमात्वन्त्वमागर्भधमंजा

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

न्यजानिगर्भंधमात्वम् । गर्भंधमात्वन्त्वमागंर्भंधङ्गंर्भंधमा
त्वमंजास्यजासित्वमागंर्भंधङ्गंर्भंधमात्वमंजासि । गर्भंधामि
तिगर्भंऽधम् । आत्वम् । त्वमंजास्यजासित्वन्त्वमंजासिगर्भं
धङ्गंर्भंधमंजासित्वन्त्वमंजासिगर्भंधम् । अजासिगर्भंधङ्गंर्भंध
मंजास्यजासिगर्भंधम् । गर्भंधमितिगर्भंऽधम् ॥ १ ॥ अम्बेऽ
अम्बिकेम्बिकेम्बेम्बेऽअम्बिकेम्बांलिकेम्बांलिकेम्बिकेम्बेम्बेऽ
अम्बिकेम्बांलिके । अम्बिकेम्बांलिकेम्बांलिकेम्बिकेम्बिके

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

म्बालिकेननाम्बालिकेम्बिकेम्बिकेम्बालिकेन । अम्बालिकेन
नाम्बालिकेबालिकेनमामानाम्बालिकेम्बालिकेनमा । नमा
माननमानयतिनयतिमाननमानयति । मानयतिनयतिमा
मानयतिकःकोनंयतिमामानयतिकः । नयतिकःकोनंयति
नयतिकश्चनचनकोनंयतिनयतिकश्चन । कश्चनचनकःकश्च
न । चनेतिचन ॥ ससंस्त्यश्वकोश्वकःससंस्तिससंस्त्यश्वकः
सुभंद्रिकाꣳसुभंद्रिकामश्वकःससंस्तिससंस्त्यश्वकःसुभंद्रि

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

काम् । अश्वकश्सुभंद्रिकाꣳसुभंद्रिकामश्वकोश्वकश्सुभंद्रि
काङ्कांपीलवासिनीङ्कांपीलवासिनीꣳसुभंद्रिकामश्वकोश्वकः
सुभंद्रिकाङ्कांपीलवासिनीम् । सुभंद्रिकङ्कांपीलवासिनीङ्कां
पीलवासिनीꣳसुभंद्रिकाꣳसुभद्रिकाङ्कांपीलवासिनीम् । सु
भंद्रिकामितिसुऽभंद्रिकाम् । कांपीलवासिनीमितिकांपीलऽ
वासिनीम् ॥ २ ॥

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

(वेद-सम्बन्धी आवश्यक बातें)

(१) उपसर्ग से परे यकारको जकार तथा वकारको द्वित्व वकारोच्चारण नहीं होता, पर व्यवस्थित विकल्प से कहीं यकार को जकार हो भी जाता है। (२) पदादि यकारको जकार और वकार को द्वित्व वकार होता है।

(३) हकार और हल संयुक्त ऋकार के योगमें भी यकारको जकार का उच्चारण होता है।

(४) टवर्ग के योग में षकार को खकारका उच्चारण नहीं होता। (५) 'वां वै वौ वः' इन वकारों को द्वित्व नहीं होता।

(६) अथ, मा, स, न—इन शब्दों से परे यकारको जकार तथा वकारको द्वित्व विकल्प से होता है।

(७) अश्व, रश्मि, मति, सुमति, स्व, सुत, चारय, घृणि, सेदिम, इत्यादि शु. प्रा. सू. ९८। अ. ३ वकार परे रहते दीर्घ होता है। लेकिन सं. अ. १७।१४ आदि स्थलोंमें वकार परे न होने से दीर्घ नहीं होता। अर्थात्—एक पदमें वकार परे रहते दीर्घ होता है। (८) त्वं यविष्ठ, रथं यज, इत्यादिमें अनुनासिक होता है। (९) चवर्गीय जकारके योगमें ञकारोच्चारण होता है।

(१०) अग्निर्मूर्धा आदिमें मकारको द्वित्व होता है। (११) तस्मात्, तस्मिन् आदिमें भी मकारको द्वित्व होता है किन्तु मकारको द्वित्वका उच्चारण नहीं किया जा सकता। (१२) पवर्गीय वकार द्वित्व नहीं होता जैसे—वर्हिपेत्वा।

(१३) अस्मिन्-गोपतौ-आदिके रहते नकारको द्वित्व हो जाता है-स्वरात्संयोगादि द्विरुच्यते सर्वत्र-से। केवल अस्मिन् के न को-द्वित्व नहीं होगा। उद्बुध्यस्वाग्नेके उत्तरार्धमें अध्युत्तरस्मिन् विश्वा। और अग्नेनय सुपथाराये अस्मान् वि०। इत्यादिमें भी न को ही द्वित्व होगा। पद पाठमें तो व को ही द्वित्व होगा। (१४) सर्वानुदात्तमें अन्तिम अक्षरमें हस्तचालन नीचे होता है बाकी बीचमें। (१५) पाष्ण्यो—संहि. २५।४० इसमें षकारको ही द्वित्व होता है तस्माच्चोत्तरं० प्रा. १।१०५। णकारको 'नानुस्वार पूर्वो ऊष्मान्तस्थाः' प्रा. ४।१०५। इससे द्वित्व का निषेध होता है। अनन्तभाष्यने भी दो षकार ही लिखा है।

(१६) ऋकारके ऊपर रेफका उच्चारण पञ्चगौड करते हैं दाक्षिणात्य नहीं करते हैं। यह संप्रदाय भेदसे किया जाता है।

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

इति पद-क्रम-विकृति निर्देशः

महामहोपाध्याय पण्डित श्रीविद्याधरशास्त्रि पुत्र श्रीदौलतरामगौड द्वारा संशोधित

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection